[2008] 3 S.C.R. 91

रामकृष्ण पिल्लई व अन्य

बनाम

मुहम्मद कुंजू व अन्य

दिनांक 20 फरवरी, 2008

मामला संख्या- अपील (सिविल) 1396-1397/2002

बेंच: न्यायाधिपति डॉ. अरिजित पसायत और पी. सदाशिवम

वाद-विक्रय के करार के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद-परिसीमा के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा वाद को खारिज करना-उच्च न्यायालय द्वारा वादी की तत्परता और इच्छा के संबंध में अभिवाक् की अनुपस्थिति के आधार पर दावे को खारिज कर दिया।

अपील पर निर्धारित किया गया: वादी द्वारा विनिर्दिष्ट अभिवाक् किया गया था और प्रतिवादियों द्वारा इसका खण्डन नहीं किया गया माननीय उच्च न्यायालय का निष्कर्ष गलत है।

अपीलार्थीओं ने वाद की संपत्तियों को बेचने के करार को विनिर्दिष्ट अनुपालना के लिए रेस्पोडेन्ट के खिलाफ दो अलग-अलग मुकदमे दायर किए। वाद में स्पष्ट कथन किए गए कि अपीलार्थी हमेशा से ही अपने हिस्से को पूर्ण करने के लिए तैयार और इच्छुक था। उत्तरदाताओं -

प्रतिवादियों ने इस आधार पर मुकदमें का विरोध किया कि समझौते वैध नहीं थे और परिसीमा द्वारा वर्जित थे। उन्होंने तत्परता और इच्छा से संबंधित अभिवाक् से इंकार नहीं किया था। विचारण न्यायालय ने परिसीमा के आधार पर मुकदमा खारिज कर दिया। गुणावगुण के आधार पर यह निर्धारित किया गया कि करार वैध और बाध्यकारी थे। उच्च न्यायालय ने यह माना कि मुकदमा परिसीमा से बाधित नहीं था और समझौते वैध और बाध्यकारी थे, लेकिन अपील को इस आधार पर खारिज कर दिया कि तत्परता और इच्छा और विवेक के प्रयोग के संबंध में कोई अभिवाक् नहीं किया गया था। इसीलिए वर्तमान अपील की गयी। न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए माना।

अभिनिर्धारित किया गया:- उच्च न्यायालय का निर्णय असुरक्षित है।

प्रतिवादियों द्वारा अपनी बाध्यताओं को पूर्व करने का वादी की तत्परता और इच्छा के संबंध में कभी कोई विवाद नहीं उठाया गया। उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह मानने में गलती की कि तत्परता और इच्छा के संबंध में कोई दलील नहीं दी गई थी। विचारण न्यायालय ने अपने फैसले में वादपत्र के विभिन्न हिस्सों का उल्लेख किया है, जहां वादी ने स्पष्ट रूप से कहा था कि वे अपने हिस्से के दायित्वों को पूर्ण करने के लिए हमेशा इच्छुक थे और है। माननीय उच्च न्यायालय यह ज्ञात करने में असफल हुआ कि लिखित कथन या प्रति आपत्तियों में कोई दलील नहीं थी

कि वादी अपने दायित्व के हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं थे।

'के०एस० विद्यान्नदम व अन्य बनाम वैरावन (1997(3) SC(1) के० नरेन्द्र बनाम रिवीएरा अपार्टमेंट (पी) लि० (1999 (S) SCC77), वी० पेचीमुथु बनाम गोवरामल (2001(7)SCC 617), मंजूनाथ अनान्दप्पा बनाम तमानसा व अन्य (2003)(10) SCC 390 व पुखराज डी० जैन और अन्य बनाम जी० गोपाल कृष्णा (2004)(7) SCC 251 निर्दिष्ट है।

सिविल अपील क्षेत्राधिकारःसिविल अपील नंबर 1396-1397 से 2002

अंतिम निर्णय आदेश दिनांक 09-07-2001 में माननीय केरल उच्च न्यायालय, इरनाकुलम ए०एस० नं-24 व 42, 1993 अपीलार्थी टी०एल० वी० अय्यर, जय किशोर सिंह, विवेक गुप्ता और सुब्रह्मण्यम प्रसाद सी०एस० राजन, ए० रघुनाथ व रोमी चाक्को प्रतिवादी।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति डॉ. अरिजित पसायत द्वारा सुनाया गया।

1. इन अपीलों में केरल उच्च न्यायालय की खंडपीठ के फैसले को चुनौती दी गई है।

2. पृष्ठभूमि तथ्यों पर कुछ विस्तार से ध्यान देने की जरूरत है।, वाद संपत्तियों को बेचने के समझौते के विशिष्ट निष्पादन के लिए दो मुकदमे

दायर किए गए थे। अपीलकर्ता नंबर 1, 1997 के ओएस नंबर 11 में वादी है जो 23.2.1987 को उप न्यायालय मवेलिकारा में दायर किया गया था। अपीलकर्ता संख्या 2 1987 के ओएस संख्या 17 में वादी है जो 28.2.1987 को दायर किया गया था। तीनों प्रतिवादी दोनों मुकदमों में समान थे। प्रतिवादी क्रमांक 1 प्रतिवादी क्रमांक 2 के भाई का बेटा है और प्रतिवादी क्रमांक 3 प्रतिवादी क्रमांक की पत्नी है।

2. प्रतिवादी संख्या 3 ने अपने और अपने पति अर्थात प्रतिवादी संख्या 2 के बीच संपत्तियों के आदान-प्रदान के तहत दो मुकदमों में उल्लिखित संपत्ति प्राप्त की। उन्होंने संपत्तियों को केरल फाइनेंशियल कॉर्पोरेशन लिमिटेड को गिरवी रख दिया। 1970 में किसी समय प्रतिवादी संख्या 3 ने अपने पति-प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में उसे संपत्ति से निपटने के लिए अधिकृत करते हुए एक पावर ऑफ अटॉर्नी निष्पादित की। 17.5.1974 को प्रतिवादी नंबर 2 ने प्रदर्श ए 8 और ए के माध्यम से पावर ऑफ अटॉर्नी द्वारा प्रदत्त शक्ति पर कार्य करते हुए संपत्ति के कुछ हिस्से प्रतिवादी नंबर 1 को बेच दिए।

इसके बाद 12.8.1974 को प्रतिवादी नंबर 3 ने पावर ऑफ अटॉर्नी रद्द कर दी। 1979 में प्रतिवादी नंबर 1 ने संपत्ति से निपटने के लिए प्रतिवादी नंबर 2 को अधिकृत करते हुए एक पावर ऑफ अटॉर्नी निष्पादित की। ऐसी पावर ऑफ अटॉर्नी के आधार पर उन्होंने 6.8.1979 को

32,000/- रुपये की कीमत पर संपत्ति और संरचनाओं का 3.5 प्रतिशत बेचने के लिए अपीलकर्ता नंबर 2 के साथ एक समझौता किया और राशि 10,000/- रुपये का अग्रिम भुगतान किया गया। अपीलकर्ता नंबर 2 तब संरचना के कब्जे का किरायेदार था और उसने सुरक्षा के रूप में 7,000/- रुपये का भुगतान किया था। इस बात पर सहमति हुई कि राशि को निर्धारित मूल्य के आंशिक भुगतान के विरुद्ध समायोजित किया जाएगा और अपीलकर्ता नंबर 2 को शेष राशि के रूप में 15,000/- रुपये का भुगतान करना था। समझौते में संकेत दिया गया कि कब्ज़ा अपीलकर्ता नंबर 2 को दिया गया था।

20.8.1979 को प्रतिवादी नंबर 2 ने पावर ऑफ अटॉर्नी धारक के रूप में अपीलकर्ता नंबर 1 को 43,500/- रुपये के प्रतिफल के लिए संरचनाओं के साथ 7.5 प्रतिशत संपत्ति बेचने का समझौता किया। जिसमें से 27,000/- रुपये अग्रिम भुगतान किया गया था। अपीलकर्ता नंबर 1 पहले से ही किरायेदार के रूप में संरचना पर कब्ज़ा कर चुका था। समझौते की शर्तें यानी प्रदर्श ए1 के समान हैं। प्रदर्श ए14. चूंकि प्रतिवादी नंबर 3 ने वित्तीय निगम को बकाया राशि का भुगतान नहीं किया, इसलिए वसूली की कार्यवाही शुरू की गई और अपीलकर्ता द्वारा देय किराया संलग्न किया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि इसके बाद प्रतिवादियों के बीच मतभेद हो गया और प्रतिवादी संख्या 3 ने प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा प्रतिवादी संख्या 1

को की गई बिक्री को चुनौती देते हुए एक मुकदमा (ओएस संख्या 42/1982) दायर किया। अपीलकर्ता उक्त मुकदमे में पक्षकार नहीं थे। . प्रतिवादी नं. 1 ने यह रुख अपनाया कि पावर ऑफ अटॉर्नी धारक के रूप में प्रतिवादी नंबर 2 के पक्ष में बिक्री वैध थी और प्रतिवादी नंबर 3 प्रार्थना की गई राहत का हकदार नहीं था। इसके बाद प्रतिवादी नंबर 3 के अधिकारों को मान्यता देते हुए विवाद का निपटारा किया गया। उसने प्रतिवादी संख्या द्वारा की गई सभी प्रतिबद्धताओं का सम्मान करने का वचन दिया। 2 संपत्ति के संबंध में. 1986 में अपीलकर्ताओं ने प्रतिवादियों से उनके पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने का आह्वान किया। 13.11.1986 को विक्रय पत्र निष्पादित करने से इन्कार करते हुए उत्तर दिया गया। जैसा कि ऊपर बताया गया है, विशिष्ट निष्पादन के लिए दो मुकदमे दायर किए गए थे। इस आशय के स्पष्ट कथन थे कि अपीलकर्ता समझौते के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक थे। प्रतिवादी 1 और 3 ने कार्यवाही का विरोध किया। यह उनका रुख था जिस पर समझौतों पर मुकदमा चला, अर्थात् प्रदर्श ए 1 और ए19 वैध नहीं हैं और प्रतिवादी पर बाध्यकारी नहीं हैं। लिमिटेशन की दलील भी ली गई. लेकिन तत्परता और तत्परता की दलील से इनकार नहीं किया गया. प्रतिवादियों के बीच पहले के विवादों का विशेष संदर्भ था। ट्रायल कोर्ट ने दिनांक 19.3.1992 के फैसले और डिक्री द्वारा योग्यता के आधार पर यह मानते हुए कि समझौते वैध हैं और प्रतिवादी के लिए बाध्यकारी हैं, मुकदमे

को परिसीमा द्वारा वर्जित मानकर खारिज कर दिया। वादीगण ने उच्च न्यायालय में अलग-अलग अपीलें दायर कीं। प्रतिवादी नंबर 3 ने समझौतों की वैध और बाध्यकारी प्रकृति पर ट्रायल कोर्ट के निष्कर्ष को चुनौती देते हुए क्रॉस-आपत्तियों का अलग-अलग ज्ञापन भी दायर किया। दिनांक 9.7.2001 के आक्षेपित निर्णय द्वारा, उच्च न्यायालय ने ट्रायल कोर्ट के इस निष्कर्ष की पुष्टि की कि समझौता वैध और बाध्यकारी है, और यह भी माना कि मुकदमे परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं थे। हालाँकि उच्च न्यायालय ने इस आधार पर मुकदमा खारिज कर दिया कि तत्परता, इच्छा और विवेक के प्रयोग के संबंध में कोई दलील नहीं दी गई थी। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने समझौते में शामिल अग्रिम के रूप में भुगतान की गई राशि की वापसी का आदेश दिया, लेकिन वादी द्वारा 3,800/- और 4,460/- रुपये के आगे के भुगतान के लिए कोई क्रेडिट नहीं दिया जाना था।

3. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय यह मानकर गंभीर त्रुटियों में रहा है कि कि तत्परता और इच्छा की दलील वादी द्वारा नहीं उठाई गई थी। इस संबंध में, मुकदमे में दिए गए कथनों का संदर्भ दिया गया है जैसा कि ट्रायल कोर्ट के फैसले में उल्लेख किया गया है। प्रतिवादियों द्वारा दायर किए गए मुद्दों और लिखित बयानों का भी संदर्भ दिया गया था। यह बताया गया कि लिखित बयानों में प्रतिवादियों द्वारा यह दलील नहीं दी गई थी कि वादी अपने दायित्व के

हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं था। इसलिए, यह प्रस्तुत किया गया कि तथ्यात्मक रूप से उच्च न्यायालय का यह मानना गलत था कि इस संबंध में कोई याचिका दायर नहीं की गई थी।

4. दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान वकील ने कहा कि इस प्रकृति के मामले पर विचार करते समय धारा 20 के मापदंडों को ध्यान में रखना होगा। यह बताया गया है कि मुकदमे उचित समय के भीतर दायर नहीं किए गए और बाद की घटनाओं का काफी प्रभाव पड़ा। यह प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय ने ठीक ही माना है कि यह दिखाने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि वादी समय के सभी प्रासंगिक बिंदुओं पर अपने दायित्व को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था। स्टैंड के समर्थन में इस न्यायालय के कई निर्णयों का संदर्भ दिया गया था जैसे केएस विद्यानदम और अन्य बनाम वैरावन (1997(3) एससीसी 1), के. नरेंद्र बनाम रिवेरा अपार्टमेंट्स (पी) लिमिटेड । (1999(5) एससीसी 77), वी. पेचिमुथु बनाम गौरम्मल (2001(7) एससीसी 617),मंजूनाथ आनंदप्पा बनाम तम्मनसा और अन्य (2003(10) एससीसी 390) और पुखराज डी. जैन एवं अन्य। वी. जी. गोपाल कृष्ण (2004 (7) एससीसी 251)। विशिष्ट निष्पादन के लिए एक मुकदमे से निपटने के दौरान विचार किए जाने वाले मापदंडों के बारे में प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा आग्रह किए गए कानून की स्थिति के साथ कोई झगड़ा नहीं हो सकता है। लेकिन उच्च न्यायालय का निर्णय

स्पष्ट रूप से असुरक्षित है। सबसे पहले, प्रतिवादियों द्वारा अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए वादी की तत्परता और इच्छा के बारे में कभी कोई विवाद नहीं उठाया गया था। उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह मानने में गलती की कि तत्परता और इच्छा के संबंध में कोई दलील नहीं दी गई थी। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, ट्रायल कोर्ट ने अपने फैसले में वादपत्र के विभिन्न हिस्सों का उल्लेख किया है जहां वादी ने स्पष्ट रूप से कहा था कि वे अपने हिस्से के दायित्वों को पूरा करने के लिए हमेशा इच्छुक थे और हैं।

5. उच्च न्यायालय के निष्कर्ष निम्नलिखित प्रभाव वाले हैं:

> "फिर सवाल यह है कि क्या संबंधित वादी ने दलील दी है और साबित किया है कि वे अनुबंधों के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक थे। भले ही समझौतों की तारीखों से दो महीने की समाप्ति पर समय चलना शुरू नहीं हुआ, परंतु निश्चित रूप से वादी को पता था कि प्रतिवादियों को अपने दायित्व का निर्वहन करना होगा और समझौते की तारीखों के दो महीने में बंधक से मुक्ति प्राप्त करनी होगी। मुकदमों से पहले नोटिस भेजने तक, यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि वादी किसी

भी समय टाइम ने प्रतिवादियों से अनुबंध में अपना हिस्सा निभाने का आह्वान किया।"

6. निष्कर्ष स्पष्ट रूप से वादी पक्ष की दलीलों के विपरीत हैं। दोनों मुकदमों में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि वादी अपने हिस्से के दायित्वों को पूरा करने के लिए हमेशा तैयार और इच्छुक हैं और प्रतिवादी किसी न किसी कारण से निष्पादन से बच रहे हैं।

7. उपरोक्त स्थिति के कारण अपीलें स्वीकार किए जाने योग्य हैं, जैसा कि हम निर्देशित करते हैं। उत्तरदाताओं को तीन महीने की अवधि के भीतर प्रतिफल की शेष राशि प्राप्त करने के बाद विक्रय विलेख निष्पादित करना होगा। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो अपीलकर्ता उस संबंध में आवश्यक कदम उठाने के लिए ट्रायल कोर्ट में जाने के लिए स्वतंत्र होंगे।

8. खर्चों के संबंध में अपील बिना किसी आदेश के स्वीकार की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी विवेक कुमार त्रिपाठी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।